International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 11-12-2021, Accepted: 26-12-2021, Published: 12-01-2022
Volume 8; Issue 1; 2022; Page No. 16-17

संजीव के 'पाँव तले की दूब' उपन्यास में शोषित मनुश्य का चित्र

Anjana A S
Research Scholar, Department of Hindi, M.G. College, University of Kerala, India

सारांश
बीसवीं सदी के सशक्त हस्ताक्षर एवं चर्चित कथाकार के रूप में संजीव पहचाने जाते है। हिन्दी साहित्य में उनकी पहचान एक अलग अहमियत रखती है। संजीव आदिवासी समाज के हित चिंतक होने के कारण उनके उपन्यास में सर्वहारा समाज की शोषण मुक्ति की मंगल कामना की गई है। अपनी कथा साहित्य द्वारा संजीव ने आदिवासी जीवन का सूक्ष्म अवलोकन किया है। 'पाँव तले की दूब' उपन्यास में संजीव ने शोषित मनुष्य का मार्मिक चित्रण किया है।

मूल शब्दः आदिवासी समाज, हितचिंतक, सर्वहारा समाज, अहमियत

प्रस्तावना

समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में संजीव एक विरल और विशिष्ट कथाकार के रूप में समादृत हैं। संजीव का सारा साहित्य हर तरह के शोषण और गैर बराबरी का विरोध करता है। हिंदी कथा जगत को नया मोड प्रदान करके संजीव जी ने अपनी अलग छवि बनाई है। काल मार्क्स के विचारों का गहरा प्रभाव होने के कारण उन्होंने साहित्य में शोषकों के प्रति हमेशा ही घृणा की भावना तथा शोषितों के प्रति सहानुभूति दिखाई देती है।

सन् 1995 में प्रकाशित संजीव का उपन्यास 'पाँव तले की दूब' झारखंड के आदिवासियों की आधुनिक समस्याओं और झारखंड आंदोलन पर केन्द्रित है। इस छोटे उपन्यास द्वारा झारखंड आंदोलन की गहरी छवि उन्होंने दर्शाया है। इस उपन्यास झारखंड आंदोलन को केंद्र बनाकर लिखा गया है। आदिवासियों के अधिकार के लिए चलने वाले आंदोलनों की समीक्षा गंभीरता से इस उपन्यास में किया है। यह उपन्यास ''एक आंदोलन धर्मी लेखक वैयक्तिक अंतर्दाह को उसकी आशा–आकांक्षाओं को उसके द्वंद्वों–तनावों को घुटन और टूटन को चित्रित करता है।''[1]

'पाँव तले की दूब' उपन्यास में मेझिया में रहने वाले आदिवासियों का चित्रण हुआ है। उनके उत्पन्न का साधन निश्चित नहीं है। दो वक्त की रोटी के लिए उन्हें कड़ी मेहनत करनी पड़ती है और उन्हें उत्सव प्रियता ने कंगाल कर दिया है। संजीव लिखते हैं – ''आदिवासी लोगों की दो कमज़ोर नसें हैं अरण्यमुखी संस्कृति उन्हें सभ्यता के विकास से जुड़ने नहीं देती और उत्सवधर्मिता इन्हें कंगाल बनाती है। हँड़िया या दारू ये पिएँगे ही और उत्सव को मस्त होकर मनाएँगे।''[2] इस कथन से स्पष्ट होता है कि आदिवासियों की माली हालत, उत्सवप्रियता औद दारू पीने की आदत ने उन्हें कंगाल बना दिया है।

'पाँव तले की दूब' उपन्यास में औद्योगीकरण के नाम पर आदिवासियों की ज़मीन का अधिग्रहण किया गया है। प्लांट की चिमनी से उड़ने वाली राख और गैसों के चलते ज़मीन बंजर हो गई है। ज़मीन में आज एक चौथाई भी अनाज नहीं होता। प्लांट बनने के बाद केवल दो प्रतिशत लोगों को सामान्य रोज़गार मिला है। बाकी आदिवासी बेकारी का शैतान लिए घूम रहे हैं। आदिवासियों की ज़मीन पर प्लांट बने हैं मुआवजा अफसरों ने और नौकरियाँ दिकुओं ने उड़ाई है। कारखाने की संपत्ति से इनकी भागीदारी खत्म की गई है वे बेरोजगारी नष्ट करने हेतु नारा लगाते हैं – ''मुआवजा या फिर नौकरी, नही तो छोड़ो डोकरी।''[3] रोज़गार के अभाव में सर्वहारा आदिवासी भूख का शिकार बना है। आदिवासियों के आरक्षित कोटे की नौकरियाँ उनसे छीनी जा रही हैं। साधन–सामग्री की लूट और बेरोजगारी के चलते पंच पहाड़ के आदिवासी आदिम जीवन जीने के लिए विवश है।

''पाँव तले की दूब सदियों से शोषकों द्वारा, रौंदी गई दूबों (आदिवासियों, दलितों) के चुभनदार कुशों में रूपांतरित होने की प्रक्रिया का आक्रोश भरी दास्तान है, यह उपन्यास।''[4] इस उपन्यास में झारखंड आंदोलन, औद्योगीकरण और जनजातीय जीवन मुख्य पहलु हैं। उपन्यास का प्रमुख पात्र है सुदीप्त। वे शोषित आदिवासियों के बारे में हमेशा चिंतित होता है। वह आदिवासियों में सांस्कृतिक चेतना जगाना चाहता है और अक्षीण परिश्रम भी करते हैं। लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिलती। संजीव गैर आदिवासी युवक है, फिर भी वह अपने आपको सामान्य जन से जोड़कर अपने सामंत पिता से भी विद्रोह करता है। इंजीनियर की नौकरी करते हुए वह आदिवासियों के हितों के लिए कार्य करता है।

आदिवासी समाज का जीवन, संस्कृति और संघर्ष को उपन्यास में अभिव्यक्त किया गया है। आदिवासी पुरानी परंपराओं और कल्पना में विचरण करते हैं। औद्योगीकरण के नाम पर सरकार इनकी ज़मीन अधिग्रहण कर रही है। ज़मीन के बदले इन्हें कभी–कभी नाम मात्र मुआवजा मिलता है तो कभी–कभी उससे भी हाथ धोना पड़ता है। सुदीप्त अभावग्रस्त आदिवासियों को सुधारने में लगा है पर वह अपने स्वप्न को पूर्ण होते ही नहीं देख सका। जब वह अपने स्वप्न को टूटता हुआ देखा है तो फस्ट्रेशन में आत्महत्या करता है। सुदीप्त की तरह हंसदा, मनीष जैसी अन्य पात्र भी आदिवासियों को अपने अधिकार देने के लिए संघर्षरत है। विस्थापन, नौकरी और रोजगार जैसी कई समस्याएँ है। आदिवासी अलग झारखंड राज्य की माँग कर रहे हैं, उन्हें सभी समस्याओं से मुक्ति पाने की माँग है। भारत की आज़ादी की समान ही झारखंड की दशा, सब कुछ वैसी ही! ज़मीन अधिग्रहण करके प्लाट बनाकर हवा, पानी प्रदूषित हो रहा है। प्रदूषित पानी नाले में छोडते है। राही पीकर आदिवासी शारीरिक रोगों का शिकार हो रहे हैं। पर इसकी आदिवासियों को कोई फिक्र नहीं है। डारान जैसी बर्बर कुप्रथा के तहत वे औरत को मारने तक पर उतारु हो जाते हैं।

उपन्यास में आदिवासी और गैर आदिवासी संघर्ष दिखाई देता है। औद्योगिक विकास के नाम पर आदिवासियों को तहस–नहस किया जा रहा है। आदिवासी भी इस बात को जानते हैं पर कुछ

चारा नहीं हैं। ध्वस्त होते आदिवासियों की वेदना का बयान करते हुए फिलिप कहते है – ''यह धरती, हमारी धरती सोना उगलती है और इस सोने की धरती की हम कंगाल संतान है।''[5] औद्योगीकरण की दुष्परिणामों से आदिवासी पूरी तरह से प्रभावित है।

'पाँव तले की दूब' उपन्यास में वेशभूषा का चित्रण इस प्रकार हुआ है – ''छात्र भी हैं, पैंट–शर्ट और कुछ एक गोगल में, तीस एक नर्सें, शिक्षिकाएँ और छात्राएँ भी हैं। पर जो चीज़ आँखों को सबसे ज़्यादा चुभती है वह है प्रौढों अरैर वृद्धों का दल जिनमें ज़्यादातर बदन पर कमीज या गंजी भी नहीं, सिर्फ मटमैली धोती या फिर मुचडे हुए पैंट, जिन्हें लत्तों या रस्सी से कमर में बाँध लिया गया है।''[6] इससे स्पष्ट होता है कि परिस्थिति एवं अर्थाभाव के कारण मेझियाँ गाँव के लोगों की वेशभूषा साधारण सी दिखायी देती है। इसमें आदिवायों का कंगाल जीवन, कुपोषण, अंधविश्वास तथा डायन जैसी भयानक कुप्रथा एवं विस्थापन उद्योग, राजनीति को कथ्य बनाया है।

प्रस्तुत उपन्यास में घटनाओं और पात्रों की भीड़ है। इसलिए घटनात्मक रोचकता का अभाव है। पत्र, डायरी, उद्धारण, स्वप्न आदि शैलियों का प्रयोग इस उपन्यास में संजीव जी सफलता से किया है। शिल्प के प्रति उन्होंने सजग कलाकार हैं। संजीव ने आदिवासी जीवन का सूक्ष्म अवलोकन किया। निष्कर्षतः कह सकते है कि यह उपन्यास संजीव की रचना–यात्रा का एक महत्वपूर्ण मानदंड है। हिंदी उपन्यास में यह एक मौलिक उपलब्धि है। उपन्यास की भाषा उल्लेखनीय है।

संदर्भ

1. डॉ. संतोष रघुनाथराव रायबीले–संजीव के कथा–साहित्य में सर्वहारा समाज, पृ. 113
2. वही, पृ. 114
3. वही, पृ. 145
4. रवीन्द्र कुमार यादव–आदिवासी स्वर और संजीव के उपन्यास, पृ. 51
5. वही, पृ. 52
6. डॉ. गजानन किशनराव पोलेनवार, संजीव के कथा–साहित्य में आदिवासी लोक–संस्कृति, पृ. 59
7. संजीव, पाँव तले की दूब, प्रवीण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 2/38, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली–110 002 (1990)
8. आदिवासी अस्मिता : प्रभुत्व और प्रतिरोध, संपादक : अनुज लुगुन, अनन्य प्रकाशन, ई–17, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली–110 032. सं. 2015
9. आदिवासी चिंतन की भूमिका – गंगा सहाय मीणा, अनन्य प्रकाशन, ई–17, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली–110032. सं. 2017
10. आदिवासी स्वर और संजीव के उपन्यास – रवीन्द्र कुमार यादव, शुभम पब्लिकेशंस, 3ए/128, हंसपुरम, कानपुर–208 021. (उ.प्र.) सं. 2021
11. आदिवासी प्रतिरोध – केदार प्रसाद वीणा, अनुज्ञा बुक्स, 1/10206, लेन नं. 1, वेस्ट गोरख पार्क, शाहदरा, दिल्ली–110032. सं. 2016
12. संजीव जनधर्मी कथाशिल्पी : संपादक डॉ. गिरीश काशिद, डॉ. जयश्री शिंदे, दिव्य डिस्ट्रीब्यूटर्स, प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता, 125/79, एल. गोविन्द नगर, कानपुर–208006. सं. 2011
13. संजीव के कथा–साहित्य में आदिवासी लोक संस्कृति, डॉ. गजानन किशनराव पोलेनवार, वान्या पब्लिकेशंस, 3ए/127, आवास विकास, हंसपुरम, नौबस्ता, कानपुर–208 021. सं. 2020
14. संजीव के कथा साहित्य में सर्वहारा समाज–डॉ. संतोष रघुनाथराव रायबोले, सारस्वत प्रकाशन, राजेन्द्रपुरी, मुसफ्फरपुर– 842001. सं. 2016
15. संजीव व्यक्तित्व एवं कृतित्व, डॉ. रामचन्द्र मारुती लौढे, ए. बी.एस. पब्लिकेशन, आशापुर, सारनाथ, वारणासी–221 007. (उ.प्र.) सं. 2012